हमारी शिक्षा व्यवस्था में शिक्षकों की स्थिति[1]

विमला रामचन्द्रन

मैं पिछले पन्द्रह सालों से 'शिक्षक' के सवाल को लेकर जूझ रही हूँ। दुर्भाग्य से शिक्षकों और सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली में उनकी केन्द्रिकता को लेकर होने वाली बहस एक–दूसरे के बहुत विपरीत है। एक ओर तो प्रशासकों, शोधकर्ताओं और लेखकों का एक बड़ा समुदाय नियमित रूप से 'शिक्षकों की आलोचना' करता रहता है तो वहीं दूसरी ओर समान रूप से मुखर एक समुदाय और है जो विपरीत दृष्टिकोण अपनाता है। इस लघु लेख का उद्देश्य यह समझने की कोशिश करना है कि हमारी प्रणाली में शिक्षकों की क्या स्थिति है और यह क्यों और कैसे सरोकार का महत्त्वपूर्ण कारण है।

हम सभी यह जानते हैं कि मात्रा, गुणवत्ता और समता के संघर्ष में सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली को बदलने के लिए शिक्षकों की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण है। पिछले तीन दशकों के अनुभव और शोध कार्यों से पता चला है कि अब संख्याओं का कोई महत्त्व नहीं है और शिक्षक प्रभावशीलता "स्कूल पर आधारित विद्यार्थी–अधिगम का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्राक्सूचक है और कई वर्षों का लगातार उत्कृष्ट शिक्षण वंचित विद्यार्थियों के अधिगम की न्यूनता की भरपाई कर सकता है..." (Vegas और Ganimian, 2011[2])। वैश्विक स्तर पर जिन प्रमुख चुनौतियों का सामना कई देश कर रहे हैं उनमें से एक शिक्षक प्रभावशीलता से सम्बन्धित है, इसमें क्षमता (शैक्षिक योग्यता/ज्ञान), प्रेरणा और प्रबन्धन शामिल हैं। अन्ततः रस्साकशी बच्चों के अधिकारों (गुणवत्तापूर्ण शिक्षा हासिल करना), शिक्षकों के अधिकार (काम करने के हालात) और इन दोनों को सन्तुलित करने की प्रणाली की क्षमता को लेकर है (Cream Wright in Chikondi Mpokosa and Susy Ndaruhutse, 2008[3])।

प्राथमिक और माध्यमिक स्कूलों के शिक्षकों के काम करने की स्थिति पर एक शोध अध्ययन के सिलसिले में पिछले तीन वर्षों में मैंने बहुत विस्तृत रूप से यात्रा की और कई शिक्षकों और प्रशासकों से बात की। बड़ी शिद्दत से जो बात उभरकर सामने आई वह यह थी कि सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली शिक्षकों को सरकारी कर्मचारियों के रूप में देखती है जिनकी प्राथमिक निष्ठा प्रशासन के प्रति है। उन्हें एक ऐसे 'शिक्षक' के रूप में नहीं देखा जाता जो बच्चों को शिक्षित करने और उनकी देखभाल करने में लगे हों। समाज में पहले जो अद्वितीय स्थान एक शिक्षक का था वह धीरे–धीरे घटता जा रहा है और देश भर के शिक्षक भी आपको यही बताएँगे कि उनकी पेशेवर पहचान कहीं खो गई है। साथ ही जिस तरह से उनकी नियुक्ति की जाती है, उनका तबादला किया जाता है या प्रबन्धन किया जाता है उसकी वजह से वे प्रशासन और राजनेताओं के बदलते हुए व्यवहार की चपेट में आ जाते हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण बात, पूरे भारत के शिक्षक आपको यह बताएँगे कि उनकी कोई स्वायत्तता नहीं है और अगर वे प्रशासन में अपने वरिष्ठ अधिकारियों के आदेश का पालन करें तो अधिकारी खुश रहते हैं। यह वाकई एक दुखद बात है, विशेष रूप से इस अप्रतिरोध्य वैश्विक साक्ष्य के आलोक में कि शिक्षक स्वायत्तता, पहचान, प्रेरणा और जवाबदेही आपस में जुड़े हुए हैं।

क्या सभी देशों में यही हाल है? पोलैण्ड, फिनलैण्ड, चीन, सिंगापुर और चिली जैसे देशों के अनुभवों के

---

[1]यह लेख विमला रामचन्द्रन, T Linden] T Beteille, एस. गोयल, एस. डे और पी.जी. चैटर्जी के नेतृत्व में किए गए हाल ही के एक अध्ययन पर आधारित है। 2015 forthcoming- Teachers in the Indian Education System- NUEPA- New Delhi। यह अध्ययन NUEP में Teacher Management and Development पर RGF Chair के तत्वावधान में राजीव गाँधी फाउण्डेशन की ओर से वित्तीय सहायता के साथ किया गया।

[2]Vegas, Emiliana Vegas and Ganimian, Alejandro J. August 2011. *What are the teacher policies in top performing and rapidly improving education systems?* SABER-teachers Background Paper No. 3. Washington DC

[3]Chikondi Mpokosa and Susy Ndaruhutse, 2008. Managing Teachers: The centrality of teacher management to quality education. Lessons from developing countries. CfBT and VSO, UK

अध्ययन से पता चलता है कि प्रणाली में शिक्षकों की जिस तरह की स्थिति होती है सफलता उसी पर निर्भर होती है। जो देश शिक्षा प्रणाली को फिर से जीवन्त करने में सक्षम हुए हैं वे कुछ मूल सिद्धान्तों का पालन करते हैं जैसेः

- पेशेवर पहचान बढ़ाने और काम करने के हालातों की बेहतरी के उद्देश्य पर आधारित मिश्रित रणनीतियों के माध्यम से सर्वश्रेष्ठ लोगों को शिक्षण के पेशे की ओर आकर्षित करना। केवल वेतन बढ़ाना पर्याप्त नहीं है।
- शिक्षकों को अच्छी तरह से तैयार करना, कक्षा के लिए अपेक्षित ज्ञान और कौशलों पर ध्यान देना। जरूरत के अनुसार सतत शिक्षा और प्रशिक्षण के अवसर प्रदान करना। अपने अधिगम की जरूरतों को पहचानने में शिक्षकों की मदद करना और समय पर तत्सम्बन्धी अवसर उपलब्ध कराना महत्त्वपूर्ण माना जाता है।
- शिक्षकों के लिए स्पष्ट अपेक्षाएँ नियत करना और उसे निरन्तर बनाए रखना क्योंकि अपेक्षाओं को बार–बार बदलने से शिक्षकों के मनोबल पर हानिकारक प्रभाव पड़ सकता है। साथ ही मूल्यांकन और प्रदर्शन की समीक्षा करने के लिए शिक्षकों, प्रधानाध्यापकों और प्रशासकों के लिए एक पारदर्शी प्रणाली स्थापित करना।
- विद्यार्थियों के साथ शिक्षक के कौशलों का मिलान करना जरूरी है–साथ में एक ऐसे प्रभावी प्रधानाध्यापक का होना भी जरूरी है जिसके पास अपने स्कूल की योजना बनाने की स्वायत्तता हो। जिन शिक्षकों का नेतृत्व ऐसे प्रभावी और प्रेरित प्रधानाध्यापक करते हों और जिन्हें कक्षा में नवाचार और प्रयोग करने की स्वायत्तता मिली हो, वे कक्षा में चमत्कार कर सकते हैं। वे प्रेरित होते हैं और उन्हें अपने कार्य पर बहुत गर्व भी होता है।
- और अन्त में सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अपने विद्यार्थियों की पढ़ाई पर नजर रखने की प्रक्रिया में शिक्षकों को शामिल करना चाहिए और इस बात में उनकी सहायता करनी चाहिए कि वे हर बच्चे की प्रगति को सुनिश्चित करें।

दुर्भाग्य से भारत में सार्वजनिक प्रणाली समस्याओं से भरी है। शिक्षक नियुक्ति की नीतियाँ तदर्थ हैं और एक सफल शिक्षक की नियुक्ति बहुत देर से और लम्बे अन्तराल के बाद होती है (कर्नाटक और तमिलनाडु जैसे राज्य इसके अपवाद हैं)। ज्यादातर राज्यों के पास यह पता लगाने के लिए एक नियमित या सामान्य प्रक्रिया नहीं है कि कितने शिक्षकों की आवश्यकता है और उनमें कौन–सी विशिष्ट योग्यताएँ या विशेषताएँ होनी चाहिए। कुछ राज्यों में नियुक्तियाँ राजनीतिक हितों से जुड़ी होती हैं जिसकी वजह से शिक्षकों की नियुक्ति, नियुक्ति की नीतियों के बजाय राजनीतिक रणनीतियों के समान लगती है। नियुक्ति का समय निर्धारण भी अपारदर्शी है। अदालत में शिक्षक–नियुक्ति से सम्बन्धित कई मामले चल रहे हैं जिससे भावी शिक्षक–उम्मीदवारों के मन में असुरक्षा की भावना आ जाती है। जिन राज्यों में नियुक्ति अपेक्षाकृत कम पारदर्शी है और योग्यता पर आधारित है (जैसे कि कर्नाटक और तमिलनाडु), वहाँ के स्कूलों में भी वास्तविक तैनाती काफी देर से होती है।

भारत में स्थानान्तरण की नीतियाँ कम ही दिखाई देती हैं। जहाँ कहीं वे हैं भी (हमारे अध्ययन के अनुसार कर्नाटक और तमिलनाडु में) तो वे हाल ही में बनी हैं। अधिकांश राज्यों में सामान्य स्थिति बहुत विक्षुब्ध करने वाली है –ज्यादातर स्थानान्तरण तदर्थ होते हैं। कई राज्यों के शिक्षक बताते हैं अपनी पसन्द के स्थानान्तरण के लिए (या अनिच्छित स्थानान्तरण रुकवाने के लिए) या जल्दी स्थानान्तरण करवाने के लिए शक्तिशाली सम्पर्क होना जरूरी है या फिर रिभवत देनी पड़ती है। कुछ राज्यों में राजनीतिक नेता औपचारिक रूप से स्थानान्तरण समिति का प्रतिनिधित्व करते हैं और कुछ स्थानान्तरण तो राजनीतिक रूप से सहायक शिक्षकों के पक्ष में पुरस्कार स्वरूप किए जाते हैं। कुछ राज्यों में सामूहिक स्थानान्तरण कर दिए जाते हैं जिससे शिक्षकों में परेशानी और घबराहट की लहर दौड़ जाती है।

आर.टी.ई. अधिनियम का कहना है कि शिक्षक को निम्नलिखित कर्तव्यों का पालन करना चाहिए :

1. नियमित रूप से समय पर स्कूल आना चाहिए;
2. पाठ्यक्रम का संचालन और उसे पूरा करना चाहिए;
3. निर्धारित समय के भीतर पूरा पाठ्यक्रम समाप्त करना चाहिए;
4. प्रत्येक बच्चे की अधिगम–क्षमता का आकलन करके तदनुसार यदि आवश्यक हो तो अतिरिक्त अनुदेश देने चाहिए;

5. माता–पिता और अभिभावकों के साथ नियमित बैठकें आयोजित करके उन्हें बच्चे की उपस्थिति की नियमितता, सीखने की क्षमता, सीखने में हुई प्रगति और किसी भी अन्य प्रासंगिक सूचना से अवगत कराना चाहिए; और
6. किसी भी अन्य निर्धारित कर्तव्य का पालन करना चाहिए। पर इन कर्तव्यों को व्यावहारिक रूप से कर पाना एक ऐसी चुनौती है जिसे अभी भी पूरी तरह से सम्बोधित किया जाना है।

ज्यादातर राज्यों में निरीक्षण, फीडबैक और समर्थन या अनुपोषण की प्रणाली दुष्क्रियापूर्ण है। पिछले दो दशकों में निरीक्षण और समर्थन प्रणाली की तुलना में स्कूलों की संख्या का तेजी से विस्तार हुआ है। इस तरह के कार्यों को अंजाम देने के लिए बहुत कम अधिकारी और सीमित संसाधन हैं। प्रणाली शिक्षकों से यह अपेक्षा करती है कि वे पाठ्यक्रम में एक साल के लिए नियत सारे अध्याय 'सिखा' दें–और इसी को उनकी प्राथमिक जिम्मेदारी की पूर्णता माना जाता है। शिक्षकों को माता–पिता और बच्चों की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए सशक्त नहीं किया जाता। किसी भी राज्य में प्रवेशन या अभिविन्यास कार्यक्रम नियमित रूप से नहीं चलाए जाते। हालाँकि सभी पदों के लिए दो साल का 'परिवीक्षाकाल' होता है जिसके बाद शिक्षक की नियुक्ति की पुष्टि की जाती है लेकिन व्यावहारिक रूप से इसकी कोई प्रासंगिकता नहीं है। अधिकारी और शिक्षक यह बताने में असमर्थ हैं कि परिवीक्षाकाल में या बाकी समय में क्या होता है और शिक्षक से क्या अपेक्षा की जाती है।

सरकारी प्राथमिक स्कूलों के लगभग 42 प्रतिशत स्कूलों में प्राथमिक कक्षाओं के लिए केवल एक या दो शिक्षक हैं। राष्ट्रीय स्तर पर स्पष्ट नीति निर्देशों के बावजूद भी ये शिक्षक प्रभावी रूप से बहु–कक्षा शिक्षण करने के तरीकों से लैस नहीं हैं। एन.सी.एफ. 2005 का सुझाव है कि बहु–कक्षा शिक्षण के लिए शिक्षकों को काफी नियोजन करना चाहिए– लेकिन शिक्षक–शिक्षा की प्रक्रिया अभी भी बहु–कक्षा की स्थिति को असंगत मानती है।

कई शिक्षक अभी तक आर.टी.ई. द्वारा निर्धारित कई प्रावधानों के साथ समझौता नहीं कर पाए हैं जैसे 'फेल न करना' और 'कोई शारीरिक दण्ड न देना'। नौ राज्यों के शिक्षकों ने कहा कि इस तरह के प्रावधान उनके पेशेवर अधिकारों को आघात पहुँचाते हैं जिसने उनके कार्यों को कठिन बना दिया है। शिक्षक और वरिष्ठ अधिकारी फेल न करने की नीति की आलोचना करते हैं। वे कहते हैं कि इसके कारण विद्यार्थी पढ़ाई नहीं करते। दूसरी ओर शिक्षाविदों का कहना है कि जिस तरह से इस नीति की व्याख्या की गई है –समस्या उसमें है– क्योंकि फेल न करने की बात को अधिगम के परिणामों का गैर आकलन समझ लिया जाता है। हालाँकि शिक्षकों ने शारीरिक दण्ड देना कम कर दिया है लेकिन ऐसा वे मजबूरी की वजह से करते हैं न कि इसलिए कि उन्हें इस अवधारणा में विश्वास है।

प्रधान अध्यापक का पद विशेष रूप से मुश्किल है। जिन राज्यों में यह अध्ययन किया गया उनमें प्रधान अध्यापक/शिक्षक पद के कई स्थान रिक्त हैं। विद्यार्थियों की देखभाल, स्कूल के वित्तीय और प्रशासनिक रिकॉर्डों को बनाए रखना; आवधिक और गैर आवधिक रिपोर्टिंग; और शिक्षा विभाग के साथ सम्पर्क रखना आदि ये सभी कार्य प्रधान अध्यापक करते हैं। पिछले डेढ़ दशकों से मध्याह्न भोजन और भवनों के निर्माण जैसी गतिविधियाँ भी प्रधान अध्यापक की प्रमुख गतिविधियाँ बन गई हैं। स्पष्ट है कि इन सबके कारण उनके पास अकादमिक सहायता और पर्यवेक्षण के लिए कम समय बचता है। अधिकांश स्कूलों में प्रशासनिक, लेखा और सहयोगी स्टाफ के न होने से यह समस्या और बढ़ जाती है।

प्रधान अध्यापक और शिक्षकों की टीम को इस बारे में बोलने का कोई अधिकार नहीं होता कि उनके स्कूल में किसे नियुक्त किया जाना चाहिए। कई राज्यों में शिक्षकों ने हमें बताया कि जब उन्हें गणित के शिक्षक की जरूरत होती है तब उन्हें भाषा का शिक्षक दे दिया जाता है! परिणामस्वरूप (विशेष रूप से प्राथमिक स्तर पर) शिक्षकों से यह उम्मीद की जाती है कि वे सारे विषय पढ़ाएँ। किसी भी प्रकार के निर्णय में उन्हें सम्मिलित नहीं किया जाता, बस आदेश दे दिया जाता है और अपनी 'ड्यूटी' करने को कहा जाता है।

सबसे दुखद फीडबैक यह था कि जो लोग हमारे स्कूल का प्रबन्धन करते हैं, संसाधन मुहैया कराते हैं और वहाँ पढ़ाते हैं, उन्हीं को सरकारी स्कूल प्रणाली में अधिक विश्वास नहीं था। हम जितने भी शिक्षकों, व्यवस्थापकों या शिक्षक–प्रशिक्षकों से मिले उनमें एक भी अपने बच्चों या नाती–पोतों को सरकारी स्कूल में पढ़ने नहीं भेजता था! जब हम अपने स्कूलों, अपने शिक्षकों और

अपने बच्चों के अधिगम के बारे में बात करते हैं तो पाते हैं कि देश भर में एक व्याकुलता की भावना है, निराशा की भावना है। लेकिन फिर भी ज्यादातर राज्यों में शिक्षक यह कहते हैं कि उनकी कुल स्थिति और काम करने की स्थिति में सुधार हुआ है। पिछले बीस वर्षों में स्कूल के और सामान्य बुनियादी ढाँचे (सड़कें, संचार, बिजली पानी) में महत्त्वपूर्ण उन्नति हुई है। सरकार ने शिक्षक–विद्यार्थी अनुपात, शिक्षण–अधिगम सामग्री के प्रावधान और पुस्तकालय व पुस्तकों की उपलब्धता की ओर भी ध्यान दिया है। छठे वेतन आयोग के बाद शिक्षकों का वेतन भी बढ़ा है। कई राज्यों ने अनुबन्धित–शिक्षक–नीतियों को बदल दिया है और अब वे सभी शिक्षकों को नियमित करने में लगे हुए हैं।

ये सभी जरूरी और महत्त्वपूर्ण मुद्दे हैं लेकिन सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शिक्षकों का दर्जा घटता जा रहा है। हमने सभी स्तरों पर यह देखा कि शिक्षकों को सरकारी कर्मचारी के रूप में पदानुक्रमिक प्रणाली के सबसे निचले स्तर पर देखा जाता है। अपनी प्रशासनिक भूमिका के आधार पर अधिकारीगण श्रेष्ठता की भावना दिखाते हैं। शिक्षकों और प्रशासकों के बीच का सम्बन्ध विवादपूर्ण है जहाँ दोनों चाहते हैं कि प्रणाली उनके पक्ष में कार्य करे। शायद यही कारण है कि शिक्षक प्रशासनिक पदों पर पदोन्नति के लिए उत्सुक रहते हैं।

एक ओर तो लगता है कि बहुत कुछ बदल गया है। सभी राज्यों ने आर.टी.ई. द्वारा प्रस्तावित अध्यापक पात्रता परीक्षा (टी.ई.टी.) को अपना लिया है। लेकिन यह समझना सम्भव नहीं था कि इससे सरकार को ऐसे शिक्षकों की नियुक्ति में मदद मिलती है या नहीं जिन्हें अपने विषय के ज्ञान और शिक्षण शास्त्र में महारत हासिल हो। इसके अलावा जिन नौ राज्यों में अध्ययन किया गया वहाँ सेवा पूर्व प्रशिक्षण अभ्यासों, पाठ्यक्रम सुधार और सेवा पूर्व शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों के आकलन के लिए टी.ई.टी. के परिणामों का उपयोग करने का कोई प्रयास नहीं किया गया। अलग–अलग राज्यों में टी.ई.टी. की अपनी गुणवत्ता के बारे में बहुत कम जानकारी है : क्या ये टेस्ट स्पष्ट रूप से लिखे गए हैं, क्या टी.ई.टी. ज्ञान और कौशल का सही तरीके से परीक्षण करता है जिसका वह दावा करता है और क्या वह समय के साथ–साथ लगातार ऐसा कर पाता है?

शिक्षकों की प्रभावशीलता का अन्तिम परीक्षण यह है कि क्या उनके द्वारा पढ़ाए गए सभी बच्चे अपनी शैक्षिक क्षमता तक पहुँचने में सक्षम हैं। शिक्षक सर्वाधिक प्रभावी तरीके से पढ़ाते हैं या नहीं, यह बात नीतियों और कार्यप्रणालियों के एक जटिल ढाँचे से निर्धारित होती है। शिक्षकों को दोष देना शायद आसान है, कठिन बात तो स्कूलों के लिए स्वायत्तता सुनिश्चित करने के लिए प्रणाली के साथ काम करना और साथ ही एक ऐसी प्रक्रिया चलाना है जिसमें शिक्षक, प्रधान अध्यापक/प्राचार्य और प्रशासन अपने कार्यों का मूल्यांकन करें और उन्हें बच्चों के लिए जवाबदेह ठहराया जा सके।

विमला रामचन्द्रन शैक्षिक अनुसन्धान इकाई, नई दिल्ली में कार्यरत हैं। वे महिला समाख्या (महिलाओं की समानता के लिए शिक्षा) की संकल्पना में शामिल थीं और मानव संसाधन विकास मंत्रालय में 1988 से 93 तक प्रथम राष्ट्रीय परियोजना निदेशक के रूप में कार्यरत रहीं। उन्होंने 1988 में शिक्षा के क्षेत्र में शोध करने वालों और पेशेवरों के नेटवर्क के रूप में शैक्षिक अनुसन्धान इकाई यानी Educational Resource Unit (अब इसे ERU Consultants Private Limited कहा जाता है) की स्थापना की। वे NEUPA में राष्ट्रीय फेलो और शिक्षक प्रबन्धन और विकास की प्रोफेसर रह चुकी हैं। वे प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा सम्बन्धी शोध कार्यों में लगी हुई हैं और उनका ध्यान लिंग और समता के मुद्दों, शिक्षक की स्थिति और प्रेरणा, प्राथमिक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय नीतियों की समता के लक्ष्यों और कार्यक्रमों को साकार करने में आने वाली बाधाओं, वयस्क साक्षरता और सतत शिक्षा पर है। वे वर्तमान में स्कूल न जाने वाले युवाओं – विशेष रूप से लड़कियों – की शैक्षिक आवश्यकताओं के शोध में लगी हुई हैं। उनसे vimalar.ramachandran@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद** : नलिनी रावल